बाल वाचन

❑ गिजु भाई

आजकल बाल साहित्य अच्छी तादाद में प्रकाशित होने लगा है। कल तक हम बालकों को जितनी पुस्तकें उपलब्ध कराते थे, आज उससे कहीं अधिक पुस्तकें उपलब्ध करा देते हैं। इस खर्च को हमने वाजिब ही नहीं उपयोगी भी माना है। बालक भी एक के बाद एक पुस्तकें उत्साह-उमंग में पढ़ते जाते हैं। पुस्तकें पढ़ते जाते हैं और ज्ञान एवं आनन्द लूटते जाते हैं। कैसे अच्छे दिन आए हैं।

पर हम बालकों को मात्र पुस्तकें दिला कर ही मुक्त नहीं हो जाते। पैसे खर्च करना आसान काम है। पैसों का समुचित उपयोग किया है या नहीं, उसका ध्यान न रखने से खर्च किए गए पैसे पानी में चले जाते हैं। यही नहीं वे नुकसान भी करते हैं। पैसे खर्च करने के बाद उन्हें उगाने का काम शेष रह जाता है।

अत: जो-जो बाल साहित्य हम बालकों के लिए खरीदें, पहले उसे स्वयं पढ़ लें। 'देखना' ही पर्याप्त नहीं है, 'पढ़ना' भी जरूरी है। इधर बालक पढ़ने में अधीर बने हैं। पढ़ने का काम अपने आप में आनन्ददायी है। पर कैसा वाचन इनके हाथ में आता है और आना चाहिए, यह हमें देखना है। वाचन का काम है आनंद देना और पाठक पर अच्छा-बुरा प्रभाव डालना। अत: जिस तरह से हमारे यहां नियम होता है कि घर में किसे आने देना और किसे न आने देना, उसी तरह से किस तरह का वाचन बालक के हाथ में रखना और किस तरह का न रखना, इस संबंध में भी हमें जाग्रत रहना चाहिए। बालकों के हाथ में बाल साहित्य रखने से पूर्व हमें स्वयं को देख लेना चाहिए।

अभी तो गुजरात में बाल साहित्य की शुरूआत ही हुई है, अत: खराब साहित्य प्रकाशित होने में कदाचित काफी समय लगे और अगर जागृति रहेगी तो वैसा साहित्य कभी सामने नहीं आएगा। फिर भी हमारा दायित्व तो पहले से ही तय है और हमें उसको कभी विस्मृत नहीं होने देना चाहिए। घर पहले से ही तय है और हमें उसे कभी विस्मृत नहीं होने देना चाहिए। घर में आने वाली प्रत्येक पुस्तक हमें पढ़ लेनी चाहिए। ऐसा करेंगे तो हम बाल साहित्य की कद्र करना सीखेंगे। बाल साहित्य खरीदने से बालकों और साहित्यकारों को क्रमश: वाचन का तथा धन का लाभ प्राप्त होता है। पर अगर इससे साहित्य का सम्मान बढ़ता है तो सत्साहित्य का विकास भी होता है और नीरस साहित्य का ह्रास भी होता है। आज जबकि बाल साहित्य के प्रति रुचि बढ़ी है, तब अलग-अलग दृष्टि से अगर बाल साहित्य का प्रकाशन ही तो उसकी योग्य रीति से कद्र करके हम माता-पिता उसके स्थायित्व-अस्थायित्व का प्रस्ताव कर सकते हैं।

जब हम स्वयं बाल साहित्य पढ़ेंगे तो हमें भी एक और लाभ होगा लेखक बालकों को सामने रख कर लिखते हैं और उन्हें लिखना भी चाहिए। पर उनके लिए क्रम से लिखने वाला हर कोई लेखक सही क्रम नहीं रख सकता। प्रत्येक बालक की कक्षा दूसरे से भिन्न होती है। अत: यह बात अनुमान से ही कही जा सकती है कि अमुक से अमुक उम्र के बालकों को अमुक-अमुक पुस्तकें दी जाएं। पर उनकी अधिक बारीक पड़ताल तो हम माता-पिता ही कर

सकते हैं। हम लोग बालकों के बीच रहते हैं। हम उनकी शक्ति को जानते हैं, अत: अगर हम स्वयं वे पुस्तकें पढ़ेंगे तो हमें ही पता लग जाएगा कि पहले कौन-सी पुस्तकें ली जाएं और कौन-सी नहीं ? बालकों के आवश्यक वाचन-क्रम को हमें ही जानना होगा। फिर उसी अनुपात में अगर हम पुस्तकें देंगे तो वे अधिक फायदेमंद होंगी।

आज के बाल साहित्य को हमें इसलिए भी पढ़ना है कि उससे हम स्वयं ज्ञान-समृद्ध हों। 'यह तो बच्चों का साहित्य है'-ऐसा कह कर उसे बालकों के लिए ही एक तरफ नहीं रख देना चाहिए। हम सबकी साहित्यिक रसज्ञता व समझदारी कहां है इसका हमें अता-पता तक नहीं। बहुत से लोग अब भी बाल साहित्य पढ़कर बालकों की भांति स्वयं लाभान्वित होते हैं। हम बड़े हो गए तो इसका यह मतलब नहीं कि वैसी पुस्तकों को लेकर बंध जाएं जो बड़ों की समझ में न आती हों। जो पुस्तकें हमारी समझ में आएं, जो ज्ञानार्जन एवं मनोविनोद करें, ऐसी पुस्तकें हमें अवश्य पढ़नी चाहिए। बाल साहित्य ऐसा ही वाचन होता है।

बाल साहित्य पढ़ने के बाद आप बाल साहित्यकारों से ऐसी रचनाएं मांग सकते हैं जो अब तक लिखी नहीं गईं। कई विषय उनके ध्यान से वंचित रह जाते हैं। अगर बाल साहित्य एक ही दिशा में दौड़ा चला जाता है तो बालकों की भलाई के लिए आप साहित्यकारों का ध्यान आकृष्ट करेंगे। हमें इस बात पर भी विचार करना चाहिए कि जो विषय बालकों को पसंद हो क्या वही बाल साहित्य के लेखन की कसौटी है ? पर क्या वह प्रवृत्ति सही है या गलत ? हमें इस पर भी विचार करना चाहिए कि क्या बाल साहित्य गंभीर हो, उपदेशात्मक हो, जो उनके चरित्र-निर्माण और नीतिमत्ता में तत्काल मददगार हो ? क्या ऐसा बाल साहित्य ही बालकों को दिया जाए ?

बाल साहित्य पढ़ेंगे तभी तो हम कह सकेंगे कि जीवनोपयोगी साहित्य की जो-जो दिशाएं हो सकती हैं, उन तमाम दिशाओं की ओर बाल साहित्य आगे बढ़ा है या नहीं। जिस प्रकार साहित्य का काम सिर्फ मनोरंजन करना ही नहीं है, उसी प्रकार से बाल साहित्य का काम भी सिर्फ यही नहीं है। जो साहित्य साहित्य-स्नेही में आनंद भरे उसे शरीर एवं मन से आगे बढ़ने का पोषण प्रदान करे वही साहित्य है, और वही बाल साहित्य है। साहित्य के नजरिए से अगर हम बाल साहित्य की परख नहीं करेंगे तो बाल साहित्य को नुकसान होगा, बालकों को नुकसान होगा और साहित्य की भी क्षति होगी।

समग्र साहित्य को क्षति इसलिए होगी कि बाल साहित्य और साहित्य दो भिन्न वस्तुएं नहीं हैं। बाल साहित्य साहित्य की आधारशिला है, सच कहूं तो वही साहित्य है। नींव पर जैसे भवन खड़ा होता है वैसे ही बाल साहित्य की नींव पर साहित्य खड़ा होता है। आज अगर हल्के से हल्का बाल साहित्य लिखेंगे या पढ़ायेंगे तो कल उच्च साहित्य भयंकर से भयंकर (क्षतिकारक) पैदा होगा। आज का बाल साहित्य जितना स्वच्छ, प्राणवान, विविध एवं सर्वग्राही होगा उतना ही कल का साहित्य होगा। अत: हमें बाल-साहित्य का बराबर मूल्यांकन करते रहना चाहिए।

पर कहीं हम पौंगा-पंडित न बन जाएं। बालकों को सभी तरह के निर्दोष साहित्य की जरूरत है। फकत घी-गुड़ ही पोषण नहीं देते, वैसे ही अमुक प्रकार का साहित्य ही पूरा पोषण नहीं देगा। अत: हमारा मूल्यांकन संकीर्ण दृष्टि से नहीं होना चाहिए। 'धर्म-नीति चाहिए', ऐसा कह कर हमें बाल साहित्य के प्रदेश को संकुचित नहीं बनाना है। गप्पों से लेकर विज्ञान तक का और मनोविनोद से लेकर गंभीर विषयों तक जीवन के विविध क्षेत्रों का बाल साहित्य हमें मांगना चाहिए और बालकों को उपलब्ध कराना चाहिए।

हमें इस वक्त बहुत अक्लमंद बनने की जरूरत नहीं है। थोड़ा बहुत कठिन हो, भाषायी त्रुटियां हों, विचारों का अभाव हो तब भी बाल साहित्य को स्वीकार कर लेना है। इस समय बाल-साहित्य सृजन के दौर से गुजर रहा है अत: जो भी आ रहा है, उसका स्वागत करना है। हमारी मांगे सख्त हों पर त्रुटियों को हम स्वयं सुधार लें और बालकों को सामान्य भूलों से

बचा लें। इसलिए हमें बाल-साहित्य का अध्ययन करने की बराबर जरूरत है।

बाल साहित्य खरीद लेने के बाद हम वहीं अटके न रह जाएं। हमें भी बालकों के साथ उनके साहित्य का आस्वादन करना है। हम उनके साथ पढ़ें। सारा का सारा बाल साहित्य ऐसा नहीं होता कि जिसे बाल स्वयं ही पढ़ समझ सकें, अपितु वह सुन कर आनन्द लेने योग्य भी होता है। बालकों को अगर हम पढ़कर सुनायेंगे तो उन्हें आनन्द तो आएगा ही, हमें भी प्रत्यक्षतया पता लग जाएगा कि उन्हें कौनसी पुस्तक पसंद आई, कौनसी नहीं आई, कैसी भाषा उन्हें कठिन लगी, किस प्रांतीय भाषा के शब्द ने उनके आनन्द को कम किया ! बालक अपनी तरफ से तो लिख कर लेखकों को भेजने से रहे कि 'भाषा में अमुक सुधार कीजिए।' जब तक हम स्वयं बालक के पास बैठ कर उन्हें सुनायेंगे नहीं, तब तक कैसे कह सकेंगे कि अमुक-अमुक बालकों के लिए 'अनुकूल' है या 'सहज-कठिन' है ! मेरे एक मित्र ने अभी-अभी मुझसे कहा है कि जब हम छोटे थे तब साहित्य के प्रति हमारी जितनी समझ थी- जितनी शक्ति थी, उससे कहीं अधिक शक्ति आज के बालकों में है। अत: हमें अपनी दृष्टि से नहीं अपितु बालकों की दृष्टि से साहित्य को देखना सीखना है। इसलिए हमें बालकों के पास बैठकर उन्हें सुनना है या फिर उनकी नजर से नजर मिलाकर साहित्य का मूल्यांकन करना सीखना है। बालक किसी किताब को न पढ़ें, कहने पर भी हाथ में न लें, सुनाने पर उसे पसंद न करें और अगर जबरन सुनाएं तो नींद ले लें, तो ऐसी पुस्तक चाहे जितने प्रतिष्ठित बाल-साहित्यकार ने लिखी हो, आहिस्ते से उठा कर ऊपर ताक पर रख देनी चाहिए और उसे बाल-साहित्य से निष्कासित कर देना चाहिए। भले ही स्वतंत्र साहित्य के रूप में उसकी कितनी ही कीमत या उपयोगिता हो, इसकी चिंता करने की जरूरत नहीं।

दूसरी बात यह कि खरीदने के बाद पुस्तकें कहीं फट न जाएं, वैसी की वैसी ही रहें, इस नीयत से उन पर सख्त पहरा नहीं बिठाना चाहिए। बालकों के लिए हम अच्छे-अच्छे कपड़े लेकर आते हैं पर उन्हें आलमारी में बंद करके रख देते हैं। कभी-कभार पहनाते भी हैं तो बहुत चेतावनी देने के बाद। कपड़े बिगड़ न जाएं, हमारी ऐसी टोकाटोकी तो चालू ही रहती है। इसी तरह हम बालकों के खिलौनों को आलमारी या घर की शोभा के रूप में सजा कर रखते है। वे बालकों के खेलने के लिए होते हैं पर रह जाते हैं मात्र देखने के लिए। इस हद तक पुस्तकों के साथ व्यवहार नहीं होना चाहिए। पुस्तकें हमेशा सुरक्षा में रहें, उनकी संभाल पहले और वाचन बाद में, दाग लग गया तो किताब नहीं मिलेगी, फट जाए तो गुस्सा- इस हद तक हमें नहीं जाना चाहिए।

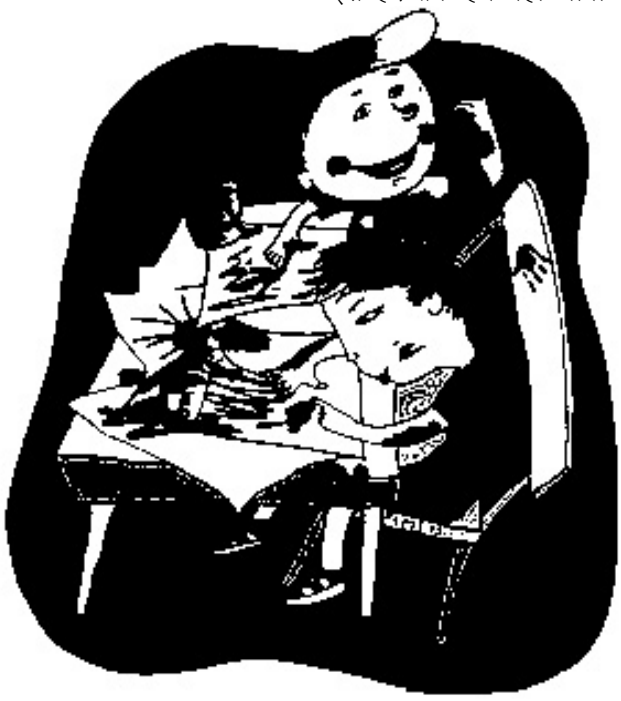

कई बार बाल-पुस्तकों की हिफाजत के बजाए लापरवाही देखने में आती है। 'ठीक है, अब बालकों को पुस्तकें दिला दी हैं, पढ़ने दो मनमर्जी से।'और सचमुच कहीं-कहीं देखने में आता है कि बच्चों की पुस्तकों की जैसे कोई कीमत ही नहीं । फटें तो कोई परवाह नहीं । क्योंकि कोई टोकता नहीं। फट जाएंगी तो दूसरी मिल जाएंगी, पापा पैसे वाले हैं और बच्चों का मुंह मांगा खरीद देते हैं। या कहीं माता या पिता स्वयं लेखक हैं, अत: किताबें तो घर में ही तैयार होती हैं।

सख्ती और लापरवाही दोनों से बचने की जरूरत है। हमें घरों में ऐसी व्यवस्था और वातावरण बनाना चाहिए कि पुस्तकों की संभाल, सम्मान और प्रबंध संभव हो सके और बालक में वैसा असर दिखाई दे।

हमें अपने घर में भी पुस्तकालय बनाना चाहिए। पुस्तकालय याने पुस्तकें रखने का स्थान । ऐसे ही वर्गवार रजिस्टर बनें और ईश्यू-बुक बनें। यह सारा काम बालकों को सौंपा जाना चाहिए। वे ही इसे संभालें। घर में एक से ज्यादा बच्चे हों तो बड़ा वाला मंत्री बने। हम उनको वर्गीकरण में मदद दें। इससे आवश्यकतानुरूप विभाग बनाने की बात बालकों को सूझेंगी। अगर कोई पुस्तक मूल्यवान भी हो तथापि अगर अयोग्य-अवांछित हो तो उसे रद्द करके निष्कासित कर देना चाहिए।

पुस्तकालय का मंत्री सबों को पुस्तकें दे और वापिस ले। इस प्रकार से, उनका शिक्षण हो जाएगा। मंत्री पद को बारी-बारी से

बदला भी जा सकता है और सबों को यह तजुर्बा दिया जा सकता है। सब अपनी जिम्मेदारी समझें, पढ़ते समय संभाल कर पढ़ें और सुव्यवस्था से लौटाएं। यह भावना सबों में आनी चाहिए। जरा आगे बढ़ेंगे तो नन्हीं सी संस्था के द्वारा अन्य दूसरी बातें सीखी जा सकती हैं, जैसे -पुस्तकालय का बजट। याने आगामी वर्ष में कितनी व कैसी पुस्तकें खरीदनी हैं। माता-पिता संस्था के अध्यक्ष बनें और बालकों द्वारा प्रस्तावित पुस्तकों को आर्थिक स्थिति के हिसाब से स्वीकृत-अस्वीकृत करें। बालकों के भावी जीवन के लिए यह कोई साधारण शिक्षा नहीं है। माता-पिता को थोड़ा कल्पनाशील होने की, समय देने की व समझदारी दिखाने की जरूरत है।

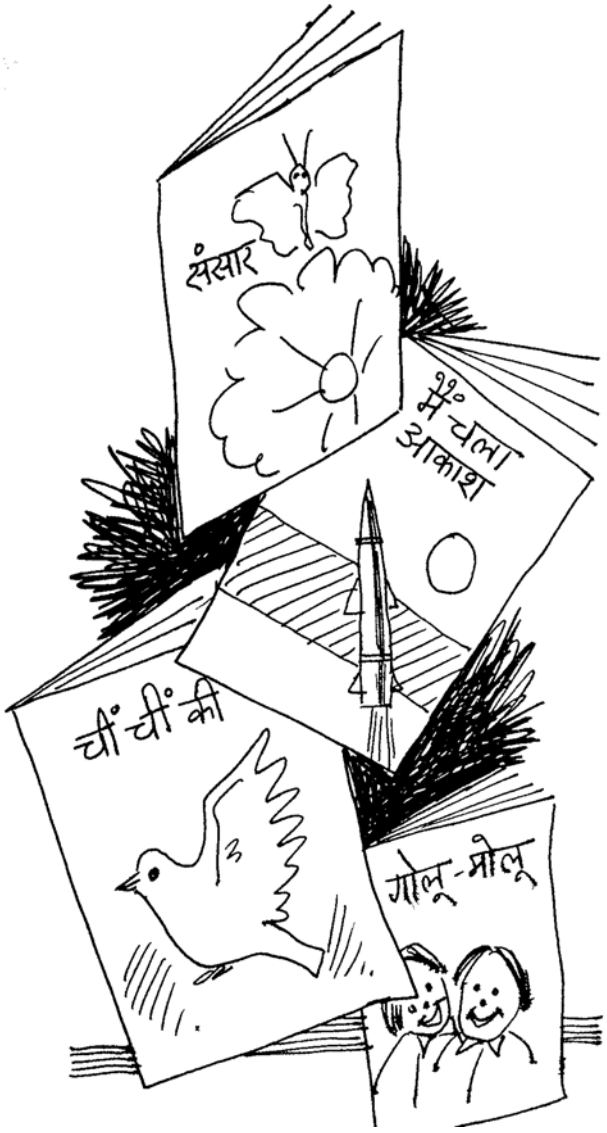

जहां घर में एक ही बालक हो, वहां जैसी भी अनुकूल लगे, वैसी ही व्यवस्था की जाए और बालक को वह दायित्व सौंप दें। मतलब यह कि पुस्तकें हमारे कब्जे में न रखी जाएं न ही वे बालक के हाथ में उत्तरदायित्व के बिना फैंक दी जाएं। हम बालक को निरंतर दायित्व सौंपते जाएं और पुस्तकें संभालते जाएं। इसी तरह हम अपनी संपूर्ण संपत्ति की मीरास बालक को सौंप सकेंगे और इसी तरह उन्हें जिम्मेदार बना सकेंगे, मात्र आलमारी में पुस्तकें रख कर हम उन्हें कभी योग्य नहीं बना सकेंगे।

पुस्तकालय के साथ वाचनालय आता है। दोनों को अलग से एक कमरे मे स्थित कर दें तो ठीक रहे। बालक भी तो नन्हें नागरिक हैं। वे भी हमारी तरह शान से वाचनालय में बैठ कर पुस्तकें पढ़ सकते हैं। ऐसी व्यवस्था करने से उनमें ऐसा भाव जागेगा और वाचनालय उन्हें एक और शिक्षा देगा। वाचनालय में शांति और व्यवस्था के साथ बैठ कर पढ़ना चाहिए यह एक नियम उनमें अनेक प्रकार का अनुशासन पैदा करेगा। प्रत्येक माता-पिता को इस दिशा में प्रयत्न करके देखना चाहिए।

बाल साहित्य के बढ़ते प्रकाशन को देखते हुए माता-पिता सब की सब किताबें नहीं खरीद सकते, यद्यपि प्रकाशक तो यही चाहते हैं कि उनकी प्रत्येक पुस्तक घर से खरीदी जाए। अगर पैसे हों तो सुविधा की दृष्टि से जितना बड़ा पुस्तकालय बनाया जा सके उतना ही अच्छा । यदि वह संभव न हो तो इतनी व्यवस्था जरूर करनी चाहिए कि वे तमाम पुस्तकें बालक के पढ़ने हेतु मिल सकें। पांच-सात साधारण परिवार अलग-अलग पुस्तकें खरीदें और आपस में पुस्तकों का विनिमय करें। प्रत्येक घर की पुस्तकें पांच-छह घरों में फिरें और सभी घरों के बालक उनसे लाभ लें। ऐसा हो सके तो कम खर्च में पुस्तकें पढ़ने की व्यवस्था हो जाए। फिर तो इस व्यवस्था के लिए जो-जो नियम जरूरी हों, बनते चलें और सब उनका पालन करें। यह प्रयोग चलता रहेगा तो सब को लाभ मिलेगा, नहीं तो सब अपने अपने घर में ही हैं।

माता-पिता या जो भी लोग बाल साहित्य खरीदते हैं तथा अपने बालकों की प्रगति में मदद करते हैं, उन्हें संसार भर के बालकों के लिए यह धर्म भी समझना चाहिए कि अच्छे साहित्य की बराबर सिफारिश करते रहें और इस प्रकार बाल साहित्य के वाचन को बढ़ने में सहयोग दें। कई बार धनिक माता-पिताओं तक बाल साहित्य की आवाज नहीं पहुंच पाती। कई बार विज्ञापनों से लोग कतराते हैं । कई बार ऐसे लोग भी होते हैं जो विज्ञापन न पढ़ें। उन सबों के अपने बच्चे हैं और बच्चों के लिए पठनीय साहित्य की जरूरत पड़ती है। अत: प्रत्येक माता-पिता को उत्तम बाल साहित्य का प्रचार करना चाहिए। ◆